

## Chapter तैंतीस

### रास नृत्य

इस अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण के उस रासनृत्य का वर्णन है, जिसे उन्होंने यमुना नदी के तटपर जंगल में अपनी प्रिय सखियों के साथ रचाया।

भगवान् श्रीकृष्ण दिव्य रसों के ज्ञान में सर्वाधिक प्रवीण हैं। गोपियाँ, जो कि उनसे स्नेह की रज्जु से बँधी थीं और उनकी सेवा में पूर्णतया समर्पित थीं, उन्हीं के साथ भगवान् ने अनेक रूपों में अपना विस्तार किया। रासनृत्य का आनन्द लेने के उत्साह में गोपियाँ मदोन्मत्त हो उठीं और गीत, नृत्य तथा प्रेमपूर्ण इशारों के द्वारा कृष्ण की इन्द्रियों को तुष्ट करने लगीं। उनकी मधुर वाणी से सारी दिशाएँ भर गईं।

भगवान् कृष्ण द्वारा अनेक रूप धारण करने पर भी प्रत्येक गोपी यही सोच रही थी कि कृष्ण अकेले उसकी ही बगल में खड़े हैं। गोपियाँ निरन्तर गाती और नाचती हुई धीरे धीरे थकने लगीं और हरएक ने अपने पास खड़े कृष्ण के कंधे पर अपनी बाँह रख दी। कुछ गोपियों ने कृष्ण की बाँह को सूँघा और चूमा जिसमें से कमल की सुगन्ध आ रही थी और वह चन्दन से लेपित थी। अन्योँ ने कृष्ण का हाथ अपने शरीर के ऊपर रखा और किन्हीं किन्हीं ने तो प्रेमपूर्वक उनका आलिंगन करते हुए उन्हेँ आनन्द प्रदान किया।

परम पूर्ण सत्य होने के कारण भगवान् कृष्ण ही वास्तविक भोक्ता तथा भोग्य साधन हैं। यद्यपि वे

अद्वितीय हैं किन्तु अपनी साकार लीलाओं को बढ़ाने के लिए वे स्वयं का अनेक रूपों में विस्तार करते हैं। इसीलिए बड़े बड़े पंडितों का कहना है कि कृष्ण की रासलीला बच्चों द्वारा अपनी ही परछाई के साथ खिलवाड़ जैसा है। श्रीकृष्ण आत्मतुष्ट हैं और अचिन्त्य दिव्य ऐश्वर्यों से पूरी तरह से युक्त हैं। जब वे *रासलीला* जैसी लीला का प्रदर्शन करते हैं, तो ब्रह्मा से लेकर एक दूब के तिनके तक सारे जीव विस्मय के सागर में मग्न हो जाते हैं।

जब महाराज परीक्षित ने गोपियों के साथ कृष्ण की माधुर्य लीलाओं की कथा सुनी, जो ऊपर तौर से कामी भ्रष्ट पुरुषों के कार्यों जैसी लगने वाली थी, तो उन्होंने महान् भक्त श्रील शुकदेव गोस्वामी से अपना सन्देह व्यक्त किया। शुकदेव ने उनका सन्देह यह कह कर दूर किया कि “चूँकि श्रीकृष्ण परम भोक्ता हैं, इस तरह की लीलाएँ कभी भी किसी दोष से कलुषित नहीं हो सकतीं। और यदि भगवान् के अतिरिक्त अन्य कोई व्यक्ति ऐसी लीलाओं का आनन्द लेना चाहेगा तो उसे वैसा ही भोग भोगना पड़ेगा जैसाकि भगवान् रुद्र के अतिरिक्त विष के सागर को पीने का प्रयास करने वाले अन्य किसी व्यक्ति को भोगना पड़ता है। यहाँ तक कि यदि कोई कृष्ण की रासलीला का अनुकरण करने का भी विचार मन में लाता है, तो उसे निश्चय ही दुर्भाग्य का सामना करना होगा।”

परम पूर्ण सत्य, श्रीकृष्ण प्रत्येक जीव के हृदय में अन्तर्यामी साक्षी के रूप में निवास करते हैं। जब कृपा करके वे अपने भक्तों को अपनी घनिष्ठ लीलाएँ प्रदर्शित करते हैं, तो ये लीलाएँ कभी भी संसारी अपूर्णता से मलिन नहीं होतीं। जो भी व्यक्ति कृष्ण के लिए गोपियों द्वारा अनुभूत प्रेमाकर्षण के विषय में सुनता है उसकी भौतिक इन्द्रियतृप्ति की इच्छाएँ समूल नष्ट हो जाती हैं और उसमें भगवान्, आध्यात्मिक गुरु तथा भगवद्भक्तों की सेवा करने की सहज रुचि का विकास होता है।

श्रीशुक उवाच

इत्थं भगवतो गोप्यः श्रुत्वा वाचः सुपेशलाः ।

जहुर्विरहजं तापं तदङ्गोपचिताशिषः ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्रीशुकदेव गोस्वामी ने कहा; इत्थम्—इस प्रकार; भगवतः—भगवान् के; गोप्यः—गोपियाँ; श्रुत्वा—सुनकर; वाचः—शब्द; सु-पेशलाः—अत्यन्त मनोहारी; जहुः—त्याग दिया; विरह-जम्—विछोह भावों से उत्पन्न; तापम्—क्लेश; तत्—उसके; अङ्ग—अंगों के (स्पर्श) से; उपचित—पूर्ण हो गयी; आशिषः—इच्छाएँ।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : जब गोपियों ने भगवान् को अत्यन्त मनोहारी इन शब्दों में कहते

सुना तो वे उनके विछोह से उत्पन्न अपना दुख भूल गईं। उनके दिव्य अंगों का स्पर्श पाकर उन्हें लगा कि उनकी सारी इच्छाएँ पूर्ण हो गईं।

तत्रारभत गोविन्दो रासक्रीडामनुव्रतैः ।

स्त्रीरत्नैरन्वितः प्रीतैरन्योन्याबद्धबाहुभिः ॥ २ ॥

#### शब्दार्थ

तत्र—वहाँ; आरभत—प्रारम्भ किया; गोविन्दः—भगवान् कृष्ण ने; रास-क्रीडाम्—रास नृत्य की लीला; अनुव्रतैः—श्रद्धायुक्त (गोपियों); स्त्री—स्त्रियों के; रत्नैः—रत्नों के साथ; अन्वितः—जुड़ी हुई; प्रीतैः—सन्तुष्ट; अन्योन्य—एक दूसरे से; आबद्ध—बाँध कर; बाहुभिः—अपनी बाँहों से।

तत्पश्चात् भगवान् गोविन्द ने वहीं यमुना के तट पर उन स्त्री-रत्न श्रद्धालु गोपियों के संग में रासनृत्य लीला प्रारंभ की जिन्होंने प्रसन्नता के मारे अपनी बाँहों को एक दूसरे के साथ श्रृंखलाबद्ध कर दिया।

रासोत्सवः सम्प्रवृत्तो गोपीमण्डलमण्डितः ।

योगेश्वरेण कृष्णेन तासां मध्ये द्वयोर्द्वयोः ॥

प्रविष्टेन गृहीतानां कण्ठे स्वनिकटं स्त्रियः ।

यं मन्येरन्नभस्तावद्विमानशतसङ्कुलम् ।

दिवौकसां सदाराणामौत्सुक्यापहतात्मनाम् ॥ ३ ॥

#### शब्दार्थ

रास—रासनृत्य का; उत्सवः—उत्सव; सम्प्रवृत्तः—प्रारम्भ हुआ; गोपी-मण्डल—गोपियों के घेरे से; मण्डितः—सज्जित; योग—योगशक्ति के; ईश्वरेण—परम नियन्ता; कृष्णेन—कृष्ण द्वारा; तासाम्—उनके; मध्ये—बीच में; द्वयोः द्वयोः—प्रत्येक जोड़े के बीच; प्रविष्टेन—उपस्थित; गृहीतानाम्—पकड़े हुए; कण्ठे—गर्दन से; स्व-निकटम्—अपने पास; स्त्रियः—स्त्रियाँ; यम्—जिसको; मन्येरन्—माना; नभः—आकाश में; तावत्—उसी समय; विमान—वायुयानों की; शत—सैकड़ों; सङ्कुलम्—भीड़ लग गई; दिव—स्वर्गलोकों के; ओकसाम्—निवासियों के; स—सहित; दाराणाम्—अपनी अपनी पत्नियों के; औत्सुक्य—उत्सुकतापूर्वक; अपहृत—ले जाये गये; आत्मनाम्—उनके मन।

तब उल्लासपूर्ण रासनृत्य प्रारम्भ हुआ जिसमें गोपियाँ एक गोलाकार घेरे में सध गईं। भगवान् कृष्ण ने अपना विस्तार किया और गोपियों के प्रत्येक जोड़े के बीच-बीच प्रविष्ट हो गये। ज्योंही योगेश्वर ने अपनी भुजाओं को उनके गलों के चारों ओर रखा तो प्रत्येक युवती ने सोचा कि वे केवल उसके ही पास खड़े हैं। इस रासनृत्य को देखने के लिए देवता तथा उनकी पत्नियाँ उत्सुकता से गद्गद हुये जा रहे थे। शीघ्र ही आकाश में उनके सैकड़ों विमानों की भीड़ लग गई।

तात्पर्य : श्रील बिल्वमंगल ठाकुर ने रासनृत्य पर निम्नलिखित श्लोक लिखा है—

अङ्गनामङ्गनामन्तरा माधवो

माधवं माधवं चान्तरेणांगनाः ।

इत्थमाकल्पिते मण्डले मध्यगः

सञ्जगौ वेणुना देवकीनन्दनः ॥

“ भगवान् माधव गोपियों की हर जोड़ी के बीच स्थित थे और उनके स्वरूपों के प्रत्येक जोड़े के बीच एक गोपी स्थित थी। देवकीपुत्र श्रीकृष्ण भी अपनी वंशी बजाते तथा गीत गाते गोलाकार के बीच में प्रकट हुए।”

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर इंगित करते हैं कि प्रेम में उन्मत्त होने के कारण गोपियाँ समझ नहीं पाईं कि श्रीकृष्ण ने अपना विस्तार कर लिया है और वे स्वयं उनमें से हर एक के साथ नृत्य कर रहे हैं। हर गोपी को कृष्ण का एक रूप दिखा। किन्तु देवतागण अपनी पत्नियों समेत अपने विमानों से रासनृत्य देखते हुए उनके विविध रूपों को देख सकते थे इसलिए वे अत्यधिक चकित थे।

ततो दुन्दुभयो नेदुर्निपेतुः पुष्पवृष्टयः ।

जगुर्गन्धर्वपतयः सस्त्रीकास्तद्यशोऽमलम् ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

ततः—तब; दुन्दुभयः—दुन्दुभियाँ; नेदुः—बजने लगीं; निपेतुः—नीचे गिरी; पुष्प—फूल की; वृष्टयः—वर्षा; जगुः—गाया; गन्धर्व-पतयः—मुख्य गन्धर्वों ने; स-स्त्रीकाः—अपनी पत्नियों समेत; तत्—उस भगवान् कृष्ण की; यशः—महिमा; अमलम्—निष्कलंक, निर्मल।

तब आकाश में दुन्दुभियाँ बज उठीं और फूलों की वर्षा होने लगी। मुख्य गन्धर्वों ने अपनी पत्नियों के साथ भगवान् कृष्ण के निर्मल यश का गायन किया।

तात्पर्य : जैसाकि यहाँ कहा गया है, रासनृत्य के समय भगवान् कृष्ण का यश शुद्ध आध्यात्मिक आनन्द है। स्वर्ग के देवताओं ने जो ब्रह्माण्ड में स्वामित्व बनाए रखने के लिए उत्तरदायी हैं, रासनृत्य को प्रसन्नतापूर्वक परम धार्मिक नृत्य माना जो भौतिक संसार में प्रेम-क्रीड़ा के विकृत परावर्तित रूप से सर्वथा भिन्न था।

वलयानां नूपुराणां किङ्किणीनां च योषिताम् ।

सप्रियाणामभूच्छब्दस्तुमुलो रासमण्डले ॥ ५ ॥

**शब्दार्थ**

वलयानाम्—कंगनों के; नूपुराणाम्—पायलों के; किङ्किणीनाम्—करधनियों के घुंघरुओं से; च—तथा; योषिताम्—स्त्रियों के; स-प्रियाणाम्—अपने प्रियतम के साथ; अभूत्—हुई; शब्दः—ध्वनि; तुमुलः—जोर की; रास-मण्डले—रासनृत्य के घेरे में।

जब गोपियाँ रासनृत्य के मण्डल में अपने प्रियतम कृष्ण के साथ नृत्य करने लगीं तो उनके कंगनों, पायलों तथा करधनी के घुंघरुओं से तुमुल ध्वनि उठती थी।

तत्रातिशुशुभे ताभिर्भगवान्देवकीसुतः ।

मध्ये मणीनां हैमानां महामरकतो यथा ॥ ६ ॥

**शब्दार्थ**

तत्र—वहाँ; अतिशुशुभे—अत्यन्त शोभायमान लगे; ताभिः—उनके साथ; भगवान्—भगवान्; देवकी-सुतः—देवकीपुत्र, कृष्ण; मध्ये—बीच में; मणीनाम्—आभूषणों के; हैमानाम्—सोने के; महा—महान्; मरकतः—मरकत; यथा—जिस तरह।

नृत्य करती गोपियों के बीच भगवान् कृष्ण अत्यन्त शोभायमान प्रतीत हो रहे थे जिस तरह सोने के आभूषणों के बीच मरकत मणि शोभा पाता है।

तात्पर्य : श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर कहते हैं कि देवकी नाम, वसुदेव की पत्नी के अलावा, माता यशोदा का भी नाम है, जैसाकि आदि पुराण में कहा गया है—द्वे नाम्नी नन्दभार्याया यशोदा देवकीति च—नन्द की पत्नी के दो नाम हैं—यशोदा तथा देवकी।

पादन्यासैर्भुजविधुतिभिः सस्मितैर्भ्रूविलासै-

र्भज्यन्मध्येश्चलकुचपटैः कुण्डलैर्गण्डलोलैः ।

स्विद्यन्मुख्यः कवररसनाग्रन्थयः कृष्णवध्वो

गायन्त्यस्तं तडित इव ता मेघचक्रे विरेजुः ॥ ७ ॥

**शब्दार्थ**

पाद—पाँवों के; न्यासैः—पड़ने से; भुज—हाथों के; विधुतिभिः—इशारों से; स-स्मितैः—हँसते हुए; भ्रू—भौंहों की; विलासैः—क्रीड़ापूर्ण गतियों से; भज्यन्—झुकते लचकते हुए; मध्येः—बीच से; चल—चलायमान; कुच—स्तनों को ढकने वाले; पटैः—वस्त्रों से; कुण्डलैः—कान की बालियों से; गण्ड—गालों पर; लोलैः—हिलते डुलते; स्विद्यन्—पसीना आता हुआ; मुख्यः—मुखोंवाली; कवर—जूड़ा; रसना—तथा करधनी; आग्रन्थयः—मजबूती से बँधी; कृष्ण-वध्वः—भगवान् कृष्ण की बधुएँ; गायन्त्यः—गाती हुई; तम्—उसके विषय में; तडितः—बिजली; इव—सदृश; ताः—वे; मेघ-चक्रे—बादलों की श्रेणी में; विरेजुः—चमकने लगीं।

जब गोपियों ने कृष्ण की प्रशंसा में गीत गाया, तो उनके पाँवों ने नृत्य किया, उनके हाथों ने इशारे किये और उनकी भौंहें हँसी से युक्त होकर मटकने लगीं। जिनकी वेणियाँ तथा कमर की पेटियाँ मजबूत बँधी हुई थीं, जिनकी कमरें लचकती हुई थी, जिनके मुखों पर पसीने की बूँदे झलकती थीं, जिनके स्तनों को ढके हुए वस्त्र इधर उधर हिलते थे तथा जिनके कानों की

बालियाँ गालों पर हिल-डुल रही थीं, कृष्ण की ऐसी तरुणी प्रियाएँ बादल के समूह में बिजली की कौंध की तरह चमक रही थीं।

तात्पर्य : श्रील श्रीधर स्वामी व्याख्या करते हैं कि बादलों में बिजली चमकने के दृष्टान्त के अनुसार गोपियों के सुन्दर मुखड़ों पर पसीने की बूँदे कुहरे की बूँदों के अनुरूप थीं और उनका गायन गर्जना के समान था। *आग्रन्थयः* शब्द को *अग्रन्थयः* के रूप में भी पढ़ा जा सकता है, जिसका अर्थ होगा—“ढीली हो गयी”। इससे यह सूचित होगा कि यद्यपि गोपियों ने बालों तथा पेटियों को मजबूती से कसकर नाचना शुरू किया था किन्तु ये धीरे धीरे ढीली पड़कर खुलने लगी।

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर संकेत करते हैं कि गोपियाँ मुद्राएँ (किसी कला-प्रदर्शन के केन्द्रीय विचार से सम्बन्धित अर्थों को बताने या भावों को अभिव्यक्त करने वाले हाथों द्वारा समुचित इशारे) प्रदर्शित करने में पटु थीं। अतः कभी कृष्ण तथा गोपियाँ अपनी बाँहें फँसाकर कलात्मक ढंग से उन्हें इकट्ठे हिलाते तो कभी बाँहें विलग करके गाये जाने वाले गीत के अर्थ को प्रकट करने के लिए मुद्राएँ बनाते।

*पादन्यासै* शब्द सूचित करता है कि गोपियों ने अपने नृत्य करते पाँवों के पगों को कलात्मक तथा शालीनता के साथ आकर्षक ढंग से रखा। *सस्मितैर्भ्रुविलासै* शब्द बतलाते हैं कि उनकी भौहों की विलासपूर्ण गतियाँ एवं प्रेमपूर्वक हँसी देखने में अत्यन्त मनोहारी लग रही थीं।

उच्चैर्जगुर्नृत्यमाना रक्तकण्ठ्यो रतिप्रियाः ।

कृष्णाभिमर्शमुदिता यद्गीतेनेदमावृतम् ॥ ८ ॥

#### शब्दार्थ

उच्चैः—जोर जोर से; जगुः—गाया; नृत्यमानाः—नाच करते हुए; रक्त—रंगीन; कण्ठ्यः—उनके गले; रति—प्रणय ( माधुर्य आनन्द ); प्रियाः—समर्पित; कृष्ण-अभिमर्श—कृष्ण के स्पर्श से; मुदिताः—हर्षित; यत्—जिनके; गीतेन—गाने से; इदम्—यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड; आवृतम्—व्याप्त है।

विविध रंगों से रँगे कंठों वाली, माधुर्यप्रेम का आनन्द लूटने की इच्छुक गोपियों ने जोर जोर से गाना गाया और नृत्य किया। वे कृष्ण का स्पर्श पाकर अति-आनन्दित थीं और उन्होंने जो गीत गाये उनसे सारा ब्रह्माण्ड भर गया।

तात्पर्य : संगीत की प्रामाणिक पुस्तक *संगीत सार* के अनुसार *तावन्त एव रागाः सूर्यावत्यो जीवजातयः*। तेषु षोडशसाहस्री पुरा गोपीकृता वरा “जितनी जीव योनियाँ हैं उतने ही संगीत के राग

हैं। इनमें से १६,००० राग प्रमुख हैं, जिन्हें गोपियाँ प्रकट कर रही थीं।” इस तरह गोपियों ने १६,००० विभिन्न राग उत्पन्न किये और वे ही बाद में सारे विश्व में फैल गये। *यद्गीतेनेदमावृत्तम्* शब्दों से यह भी सूचित होता है कि आज भी सारे विश्व में भक्तगण गोपियों का अनुकरण करते हुए कृष्ण की महिमा का गायन करते हैं।

काचित्समं मुकुन्देन स्वरजातीरमिश्रिताः ।  
उन्निन्ये पूजिता तेन प्रीयता साधु साध्विति ।  
तदेव ध्रुवमुन्निन्ये तस्यै मानं च बहदात् ॥ ९ ॥

#### शब्दार्थ

काचित्—कोई कोई; समम्—साथ; मुकुन्देन—कृष्ण के; स्वर-जातीः—शुद्ध संगीतमय स्वर; अमिश्रिताः—कृष्ण द्वारा निकाली गई ध्वनि से न मिला हुआ; उन्निन्ये—अलापा, छोड़ा; पूजिता—सम्मानित; तेन—उसके द्वारा; प्रीयता—प्रसन्न; साधु साधु इति—“बहुत अच्छा, बहुत अच्छा” कहते हुए; तत् एव—वही ( राग ); ध्रुवम्—ध्रुपद सहित; उन्निन्ये—अलापा ( अन्य गोपी ने ); तस्यै—उसको; मानम्—विशेष आदर; च—तथा; बहु—अधिक; अदात्—प्रदान किया।

एक गोपी ने भगवान् मुकुन्द के गाने के साथ साथ शुद्ध मधुर राग गाया जो कृष्ण के स्वर से भी उच्च सुर ऊँचे स्वर में था। इससे कृष्ण प्रसन्न हुए और “बहुत अच्छा, बहुत अच्छा” कहकर उसकी प्रशंसा की। तत्पश्चात् एक दूसरी गोपी ने वही राग अलापा किन्तु वह ध्रुपद के विशेष छंद में था। कृष्ण ने उसकी भी प्रशंसा की।

काचिद्रासपरिश्रान्ता पार्श्वस्थस्य गदाभृतः ।  
जग्राह बाहुना स्कन्धं श्लथद्वलयमल्लिका ॥ १० ॥

#### शब्दार्थ

काचित्—कोई गोपी; रास—रासनृत्य से; परिश्रान्ता—थकी हुई; पार्श्व—बगल में; स्थस्य—खड़े हुए; गदा-भृतः—गदाधारी भगवान् कृष्ण के; जग्राह—पकड़ लिया; बाहुना—अपनी बाँह से; स्कन्धम्—कन्धे को; श्लथत्—ढीला करते हुए; वलय—अपने कंगन; मल्लिका—तथा ( बालों में गुँथे ) फूल।

जब एक गोपी रासनृत्य से थक गई तो वह अपनी बगल में खड़े गदाधर कृष्ण की ओर मुड़ी और उसने अपनी बाँह से उनके कन्धे को पकड़ लिया। नाचने से उसके कंगन तथा बालों में लगे फूल ढीले पड़ गये थे।

तात्पर्य : पिछले श्लोक में बताया गया है कि कृष्ण ने गोपियों के गायन तथा नृत्य की सराहना की और इस श्लोक में हम देखते हैं कि किस तरह गोपियों ने उनके साथ घनिष्ठता एवं विश्वास से पूर्ण आचरण किया। यहाँ पर एक थकी हुई गोपी कृष्ण के कन्धे पर अपनी बाँह टेक कर विश्राम लेने

लगी ।

श्रील जीव गोस्वामी की व्याख्या है कि इस श्लोक में प्रयुक्त गदा शब्द नृत्य-शिक्षक के उपयुक्त गदा की ओर संकेत करता है। कृष्ण अपने साथ यह गदा रासनृत्य के आनन्द को बढ़ाने के लिए ले आये थे। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती कहते हैं कि यहाँ पर जिस गोपी का उल्लेख है, वह श्रीमती राधारानी है, जबकि पिछले श्लोक में वर्णित दो गोपियाँ क्रमशः विशाखा तथा ललिता हैं।

तत्रैकांसगतं बाहुं कृष्णस्योत्पलसौरभम् ।

चन्दनालिप्तमाघ्राय हृष्टरोमा चुचुम्ब ह ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

तत्र—वहाँ; एका—एक ( गोपी ); अंस—अपने कन्धे पर; गतम्—रखी हुई; बाहुम्—बाँह को; कृष्णस्य—कृष्ण की; उत्पल—नीले कमल सदृश; सौरभम्—जिसकी सुगन्ध; चन्दन—चन्दन लेप से; आलिप्तम्—लेप की हुई; आघ्राय—महकती हुई; हृष्ट—खड़े हुए; रोमा—शरीर के रोएँ; चुचुम्ब ह—उसने चूम लिया।

कृष्ण ने अपनी बाँह एक गोपी के कन्धे पर रख दी जिसमें से प्राकृतिक नीले कमल की सुगन्ध के साथ उसमें लेपित चन्दन की मिली हुई सुगन्ध आ रही थी। ज्योंही गोपी ने उस सुगन्ध का आस्वादन किया त्योंही हर्ष से उसे रोमांच हो उठा और उसने उनकी बाँह को चूम लिया।

कस्याश्चिन्नाट्यविक्षिप्त कुण्डलत्विषमण्डितम् ।

गण्डं गण्डे सन्दधत्याः प्रादात्ताम्बूलचर्वितम् ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

कस्याश्चित्—किसी एक गोपी; नाट्य—नाचने से; विक्षिप्त—हिलता हुआ; कुण्डल—कान की बालियाँ; त्विष—चमक से; मण्डितम्—सुशोभित; गण्डम्—अपने कपोल; गण्डे—कृष्ण के गाल के निकट; सन्दधत्याः—रखती हुई; प्रादात्—सावधानी पूर्वक दे दिया; ताम्बूल—पान; चर्वितम्—चबाया हुआ।

एक गोपी ने कृष्ण के गाल पर अपना गाल रख दिया जो उसके कुंडलों से सुशोभित था और उसके नाचते समय चमचमा रहा था। तब कृष्ण ने बड़ी ही सावधानी से उसे अपना चबाया पान दे दिया।

नृत्यती गायती काचित्कूजन्नूपुरमेखला ।

पार्श्वस्थाच्युतहस्ताब्जं श्रान्ताधात्स्तनयोः शिवम् ॥ १३ ॥

शब्दार्थ



नृत्यती—नाचती; गायती—गाती; काचित्—कोई गोपी; कूजन्—झनकार करते; नूपुर—घुंघरू की; मेखला—तथा अपनी करधनी; पार्श्व-स्थ—उसके पास में ही खड़े; अच्युत—भगवान् कृष्ण का; हस्त-अब्जम्—करकमल; श्रान्ता—थककर; अधात्—रख लिया; स्तनयोः—अपने स्तनों पर; शिवम्—सुखद।

एक अन्य नाचती तथा गाती हुई गोपी, जिसके पाँवों के नूपुर और कमर की करधनी के घुंघरू बज रहे थे, थक गई अतः उसने अपने पास ही खड़े भगवान् अच्युत के सुखद करकमल को अपने स्तनों के ऊपर रख लिया।

गोप्यो लब्ध्वाच्युतं कान्तं श्रिय एकान्तवल्लभम् ।

गृहीतकण्ठ्यस्तद्वोर्भ्यां गायन्त्यस्तम्बिजहिरे ॥ १४ ॥

#### शब्दार्थ

गोप्यः—गोपियों; लब्ध्वा—पाकर; अच्युतम्—अच्युत भगवान् को; कान्तम्—अपने प्रेमी के रूप में; श्रियः—लक्ष्मी के; एकान्त—एकमात्र; वल्लभम्—प्रेमी को; गृहीत—पकड़े हुए; कण्ठ्यः—उनके गलों को; तत्—उसका; दोर्भ्याम्—भुजाओं से; गायन्त्यः—गाती हुई; तम्—उसको; विजहिरे—आनन्द लूटा।

लक्ष्मी जी के विशिष्टप्रिय भगवान् अच्युत को अपने घनिष्ठ प्रेमी के रूप में पाकर गोपियों ने अथाह आनन्द लूटा। वे उनको अपनी भुजाओं में लपेटे थे और ये उनके यश का गान कर रही थीं।

कर्णोत्पलालकविटङ्ककपोलघर्म-

वक्त्रश्रियो वलयनूपुरघोषवाद्यैः ।

गोप्यः समं भगवता ननृतुः स्वकेश-

स्त्रस्तस्त्रजो भ्रमरगायकरासगोष्ठ्याम् ॥ १५ ॥

#### शब्दार्थ

कर्ण—उनके कानों में; उत्पल—कमल के फूल से; अलक—उनकी लटों से; वितङ्क—अलंकृत; कपोल—उनके गाल; घर्म—पसीने से; वक्त्र—उनके मुखों के; श्रियः—सौन्दर्य; वलय—कंगन; नूपुर—तथा घुंघरू के; घोष—शब्द का; वाद्यैः—बाजे से; गोप्यः—गोपियों ने; समम्—साथ; भगवता—भगवान् के; ननृतुः—नाचा; स्व—अपने लिए; केश—बाल से; स्त्रस्त—बिखरी; स्त्रजः—मालाएँ; भ्रमर—भौरें; गायक—गानेवाले; रास—रासनृत्य की; गोष्ठ्याम्—गोष्ठी में।

कानों के पीछे लगे कमल के फूल, गालों को अलंकृत कर रही बालों की लटें तथा पसीने की बूँदें गोपियों के मुखों की शोभा बढ़ा रही थीं। उनके बाजुबंदों तथा घुंघरूओं की रुनझुन से जोर की संगीतात्मक ध्वनि उत्पन्न हो रही थी और उनके जूड़े बिखरे हुए थे। इस तरह गोपियाँ भगवान् के साथ रासनृत्य के स्थल पर नाचने लगीं और उनका साथ देते हुए भौरों के झुंड गुनगुनाने लगे।

एवं परिष्वङ्गकराभिमर्श-

स्निग्धेक्षणोद्दामविलासहासैः ।

रेमे रमेशो ब्रजसुन्दरीभि-

र्यथार्भकः स्वप्रतिबिम्बविभ्रमः ॥ १६ ॥

#### शब्दार्थ

एवम्—इस तरह; परिष्वङ्ग—आलिंगन करते हुए; कर—अपने हाथ से; अभिमर्श—स्पर्श करते हुए; स्निग्ध—स्नेहिल; ईक्षण—चितवनों से; उद्दाम—तिरछी, चौड़ी; विलास—चंचल; हासैः—हँसी से युक्त; रेमे—आनन्द लूटा; रमा—लक्ष्मी जी के; ईशः—स्वामी ने; ब्रज-सुन्दरीभिः—ग्वालजाति की तरुणियों के साथ; यथा—जिस तरह; अर्भकः—एक बालक; स्व—अपनी; प्रतिबिम्ब—परछाई से; विभ्रमः—खेलवाड़ ।

इस प्रकार आदि भगवान् नारायण, लक्ष्मीपति भगवान् कृष्ण ने ब्रज की युवतियों का आलिंगन करके, उन्हें दुलार करके तथा अपनी तिरछी चंचल हँसी से उन्हें प्रेमपूर्वक निहार करके उनके साथ में आनन्द लूटा । यह वैसा ही था जैसे कि कोई बालक अपनी परछाई के साथ खेल रहा हो ।

तात्पर्य : श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने इस श्लोक की टीका इस प्रकार की है “केवल भगवान् कृष्ण ही परम पूर्ण सत्य हैं और उनकी शक्तियाँ असीम हैं । ये असीम शक्तियाँ साकार होकर भगवान् कृष्ण को उनकी लीलाओं में प्रवृत्त करती हैं । जिस प्रकार उनकी एक परम दिव्य शक्ति की ऐश्वर्यपूर्ण अभिव्यक्ति से भगवान् की असंख्य शक्तियाँ प्रकट हो जाती हैं उसी तरह रासनृत्य में कृष्ण अपने को उतने ही गुने रूपों में प्रकट करते हैं जितनी शक्तियाँ गोपियों के रूप में हैं । हर वस्तु कृष्ण है किन्तु कृष्ण की इच्छा से उनकी आध्यात्मिक शक्ति योगमाया गोपियों को प्रकट करती है । जब उनकी अन्तरंगा शक्ति योगमाया उनके दिव्य भावों के प्रवर्धन हेतु ऐसी लीलाएँ प्रकट करती है, तो यह वैसा ही होता है जैसे कि कोई बालक अपनी ही परछाई से खेल रहा हो । किन्तु चूँकि ये लीलाएँ उनकी ही आध्यात्मिक शक्ति द्वारा रची जाती हैं अतः वे नित्य तथा स्वतः प्रकट होने वाली हैं ।”

तदङ्गसङ्गप्रमुदाकुलेन्द्रियाः

केशान्दुकूलं कुचपट्टिकां वा ।

नाञ्जः प्रतिव्योढुमलं ब्रजस्त्रियो

विस्त्रस्तमालाभरणाः कुरूद्वह ॥ १७ ॥

#### शब्दार्थ

तत्—उनके साथ; अङ्ग-सङ्ग—शारीरिक स्पर्श से; प्रमुदा—हर्ष से; आकुल—व्याकुल; इन्द्रियाः—जिनकी इन्द्रियाँ; केशान्—उनके बाल; दुकूलम्—वस्त्र; कुच-पट्टिकाम्—स्तनों को ढकने वाले वस्त्र, चोलियाँ; वा—अथवा; न—नहीं; अञ्जः—आसानी

से; प्रतिव्योढुम्—सुसज्जित रखने के लिए; अलम्—समर्थ; व्रज-स्त्रियः—व्रज की स्त्रियाँ; विस्त्रस्त—बिखरी हुई; माला—फूलों की मालाएँ; आभरणाः—तथा गहने; कुरु-उद्धह—हे कुरुवंश के परम विख्यात सदस्य ।

उनका शारीरिक संसर्ग पा लेने से गोपियों की इन्द्रियाँ हर्ष से अभिभूत हो गईं जिसके कारण वे अपने बाल, अपने वस्त्र तथा स्तनों के आवरणों को अस्तव्यस्त होने से रोक न सकीं । हे कुरुवंश के वीर, उनकी मालाएँ तथा उनके गहने बिखर गये ।

कृष्णविक्रीडितं वीक्ष्य मुमुहुः खेचरस्त्रियः ।

कामार्दिताः शशाङ्कश्च सगणो विस्मितोऽभवत् ॥ १८ ॥

#### शब्दार्थ

कृष्ण-विक्रीडितम्—कृष्ण की क्रीड़ा; वीक्ष्य—देखकर; मुमुहुः—मोहित हो गई; खे-चर—आकाश में यात्रा करती; स्त्रियः—स्त्रियाँ ( देवियाँ ); काम—काम वासना से; अर्दिताः—चलायमान; शशाङ्कः—चन्द्रमा; च—भी; स-गणः—अपने अनुचर तारों सहित; विस्मितः—चकित; अभवत्—हुआ ।

देवताओं की पत्नियाँ अपने विमानों से कृष्ण की क्रीड़ाएँ देखकर सम्मोहित हो गईं और कामवासना से विचलित हो उठीं । वस्तुतः चन्द्रमा तक भी अपने पार्षद तारों समेत चकित हो उठा ।

कृत्वा तावन्तमात्मानं यावतीर्गोपयोषितः ।

रेमे स भगवांस्ताभिरात्मारामोऽपि लीलया ॥ १९ ॥

#### शब्दार्थ

कृत्वा—करके, बनाकर; तावन्तम्—उतने गुना बढ़ाकर; आत्मानम्—अपने को; यावतीः—जितनी; गोप-योषितः—गोप स्त्रियाँ; रेमे—विलास किया; सः—उस; भगवान्—भगवान् ने; ताभिः—उनके साथ; आत्म-आरामः—आत्म-तुष्टि; अपि—यद्यपि; लीलया—लीला के रूप में ।

वहाँ पर जितनी गोपिकाएँ थीं उतने ही रूपों में विस्तार करके, भगवान् ने खेल खेल में उनकी संगति का आनन्द लूटा यद्यपि वे आत्माराम हैं ।

तात्पर्य : जैसाकि श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती संकेत करते हैं, यह तो पहले ही बतलाया जा चुका है कि भगवान् कृष्ण समस्त भौतिक इच्छाओं से मुक्त हैं और आध्यात्मिक आत्म-तुष्टि के पद परमपूर्ण हैं ।

तासां रतिविहारेण श्रान्तानां वदनानि सः ।

प्रामृजत्करुणः प्रेम्णा शन्तमेनाङ्ग पाणिना ॥ २० ॥

#### शब्दार्थ

तासाम्—उन गोपियों के; रति—माधुर्य प्रेम के; विहारेण—भोग विलास के द्वारा; श्रान्तानाम्—थकी हुई; वदनानि—मुख; सः—उसने; प्रामृजत्—पोंछा; करुणः—दयालु; प्रेम्णा—प्रेमपूर्वक; शान्तमेन—अत्यन्त सुखद; अङ्ग—हे प्रिय ( राजा परीक्षित ); पाणिना—अपने हाथ से।

यह देखकर कि गोपियाँ माधुर्य विहार करने से थक गई थीं, हे राजन ( परीक्षित ), दयालु श्रीकृष्ण ने बड़े ही प्रेम से उनके मुखों को अपने सुखद हाथों से पोंछा।

गोप्यः स्फुरत्पुरटकुण्डलकुन्तलत्विड्-  
गण्डश्रिया सुधितहासनिरीक्षणेन ।  
मानं दधत्य ऋषभस्य जगुः कृतानि  
पुण्यानि तत्कररुहस्पर्शप्रमोदाः ॥ २१ ॥

#### शब्दार्थ

गोप्यः—गोपियाँ; स्फुरत्—चमकते हुए; पुरट—सुनहले; कुण्डल—अपने कान की बालियों का; कुन्तल—तथा अपने ( घुँघराले ) केशों के; त्विड्—तेज का; गण्ड—कपोलों के; श्रिया—सौन्दर्य से; सुधित—अमृतमय बनाया गया; हास—हँसी; निरीक्षणेन—अपनी चितवन से; मानम्—आदर; दधत्यः—देते हुए; ऋषभस्य—अपने नायक के; जगुः—गाया; कृतानि—कार्यकलापों को; पुण्यानि—शुभ; तत्—उसके; कर-रुह—हाथ के नाखूनों के; स्पर्श—स्पर्श से; प्रमोदाः—अत्यधिक प्रमुदित।

अपने गालों के सौंदर्य, घुँघराले बालों के तेज एवं सुनहरे कुंडलों की चमक से मधुरित हँसीयुक्त चितवनों से गोपियों ने अपने नायक को सम्मान दियाकिया। उनके नखों के स्पर्श से पुलकित होकर वे उनकी शुभ दिव्य लीलाओं का गान करने लगीं।

ताभिर्युतः श्रममपोहितुमङ्गसङ्ग-  
घृष्टस्त्रजः स कुचकुङ्कु मरञ्जितायाः ।  
गन्धर्वपालिभिरनुद्रुत आविशद्वाः  
श्रान्तो गजीभिरभराडिव भिन्नसेतुः ॥ २२ ॥

#### शब्दार्थ

ताभिः—उनके द्वारा; युतः—युक्त; श्रमम्—थकावट; अपोहितुम्—दूर करने के लिए; अङ्ग-सङ्ग—उनकी माधुर्य संगति से; घृष्ट—कुचली गयी; स्त्रजः—माला; सः—वह; कुच—उनके स्तनों के; कुङ्कुम—सिंदूर से; रञ्जितायाः—पुता हुआ; गन्धर्व-प—जो गंधर्वों की तरह लग रहा था; अलिभिः—भौरा से; अनुद्रुतः—तेजी से पीछा किया जाता हुआ; आविशत्—प्रवेश किया; वाः—जल; श्रान्तः—थका; गजीभिः—हथिनियों के साथ; इभ-राट्—शाही हाथी; इव—सदृश; भिन्न—छिन्न-भिन्न करके; सेतुः—धान के खेत की मेड़ें।

भगवान् श्रीकृष्ण की माला गोपियों के साथ माधुर्य विहार करते समय कुचल गई थी और उनके स्तनों के कुंकुम से सिंदूरी रंग की हो गई थी। गोपियों की थकान मिटाने के लिए कृष्ण यमुना के जल में घुस गये, जिनका पीछा तेजी से भौरें कर रहे थे, जो श्रेष्ठतम गन्धर्वों की तरह गा रहे थे। कृष्ण ऐसे लग रहे थे मानो कोई राजसी हाथी अपनी संगिनियों के साथ जल में

सुस्ताने के लिए प्रविष्ट हो रहा हो। निस्सन्देह भगवान् ने सारी लोक तथा वेद की मर्यादा का उसी तरह अतिक्रमण कर दिया जिस तरह एक शक्तिशाली हाथी धान के खेतों की रौंद डालता है।

सोऽम्भस्यलं युवतिभिः परिषिच्यमानः

प्रेम्णोक्षितः प्रहसतीभिरितस्ततोऽङ्ग ।

वैमानिकैः कुसुमवर्षिभिरीद्यमानो

रेमे स्वयं स्वरतिरत्र गजेन्द्रलीलः ॥ २३ ॥

#### शब्दार्थ

सः—वह; अम्भसि—जल में; अलम्—अत्यधिक; युवतिभिः—युवतियों के साथ; परिषिच्यमानः—जल उलीच करके; प्रेम्णा—प्रेमपूर्वक; ईक्षितः—देखे जाकर; प्रहसतीभिः—हँसने वालियों के द्वारा; इतः ततः—इधर उधर; अङ्ग—हे राजन्; वैमानिकैः—विमानों से यात्रा कर रही; कुसुम—फूल; वर्षिभिः—बरसाती हुई; ईड्यमानः—पूजित होकर; रेमे—विहार किया; स्वयम्—खुद; स्व-रतिः—आत्मतृष्ट होकर; अत्र—यहाँ; गज-इन्द्र—हाथियों का राजा; लीलः—लीला।

हे राजन्, जल में कृष्ण ने अपने ऊपर चारों ओर से हँसती एवं अपनी ओर प्रेमपूर्ण निहारती गोपियों के द्वारा जल उलीचा जाते देखा। जब देवतागण अपने विमानों से उनपर फूल वर्षा करके उनकी पूजा कर रहे थे तो आत्मतृष्ट भगवान् हाथियों के राजा की तरह क्रीड़ा करने का आनन्द लेने लगे।

ततश्च कृष्णोपवने जलस्थल-

प्रसूनगन्धानिलजुष्टदिक्ते ।

चचार भृङ्गप्रमदागणावृतो

यथा मदच्युद्दिवरदः करेणुभिः ॥ २४ ॥

#### शब्दार्थ

ततः—तब; च—तथा; कृष्णा—यमुना नदी के; उपवने—छोटे जंगल में; जल—जल; स्थल—तथा भूमि के; प्रसून—फूलों की; गन्ध—सुगन्धि से; अनिल—वायु से; जुष्ट—साथ हो लिये; दिक्-तटे—दिशाओं के छोर; चचार—गुजरा; भृङ्ग—भौरों; प्रमदा—तथा स्त्रियों के; गण—समूह से; आवृतः—घिरा; यथा—जिस प्रकार; मद-च्युत्—उत्तेजना से अपने मस्तक से रस चुवाता; द्विरदः—हाथी; करेणुभिः—हथिनियों के साथ।

तत्पश्चात् भगवान् ने यमुना के किनारे स्थित एक छोटे से उपवन में भ्रमण किया। यह उपवन स्थल तथा जल में उगने वाले फूलों की सुगन्ध लेकर बहने वाली मन्द वायु से भरपूर था। भौरों तथा सुन्दर स्त्रियों के साथ भ्रमण कर रहे भगवान् कृष्ण ऐसे लग रहे थे मानों कोई मदमत्त हाथी अपनी हथिनियों के साथ जा रहा हो।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती के अनुसार यह यहाँ स्वतः समझने योग्य है कि जल-विहार के बाद कृष्ण ने देह में मालिश कराई और तब अपने प्रिय वस्त्र पहन कर गोपियों के साथ उन्होंने अपनी

लीलाएँ फिर आरम्भ कर दीं ।

एवं शशाङ्कान्शुविराजिता निशाः

स सत्यकामोऽनुरताबलागणः ।

सिषेव आत्मन्यवरुद्धसौरतः

सर्वाः शरत्काव्यकथारसाश्रयाः ॥ २५ ॥

#### शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; शशाङ्क—चन्द्रमा की; अंशु—किरणों से; विराजिता:—चमकाई गई; निशाः—रात्रियाँ; सः—वह; सत्य-कामः—जिसकी इच्छाएँ सदैव पूरी होती हैं; अनुरत—उनमें निरन्तर अनुरक्त; अबला-गणः—अनेक सखियों; सिषेवे—लाभ उठाया; आत्मनि—अपने में; अवरुद्ध—सुरक्षित; सौरतः—मैथुन या काम भाव; सर्वाः—सभी ( रातें ); शरत्—शरदऋतु की; काव्य—काव्यमय; कथा—कहानियों का; रस—दिव्य रसों का; आश्रयाः—आधार ।

यद्यपि गोपियाँ सत्यकाम कृष्ण के प्रति दृढ़तापूर्वक अनुरक्त थीं किन्तु भीतर से भगवान् किसी संसारी काम-भावना से प्रभावित नहीं थे । फिर भी उन्होंने अपनी लीलाएँ सम्पन्न करने के लिए चाँदनी से खिली हुई उन समस्त शरतकालीन रातों का लाभ उठाया जो दिव्य विषयों के काव्यमय वर्णन के लिए प्रेरणा देती हैं ।

तात्पर्य : रस का सही सही वर्णन करना कठिन है । यह वह आध्यात्मिक आनन्द है, जो भगवान् कृष्ण के साथ प्रेममय सम्बन्ध होने पर अनुभव किया जाता है । वह आनन्द भगवान् तथा उनके भक्तों के साथ आध्यात्मिक लीलाओं के मध्य अनुभव किया जाता है । श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती बतलाते हैं कि व्यास, पराशर, जयदेव, लीलाशुक ( बिल्वमंगल ठाकुर ), गोवर्धनाचार्य तथा श्रील रूप गोस्वामी जैसे वैष्णव कवियों ने भगवान् के माधुर्य व्यापारों का वर्णन अपने अपने काव्यों में करने का प्रयास किया है । किन्तु ये वर्णन पूर्ण नहीं हैं क्योंकि भगवान् की लीलाएँ अनन्त हैं अतः ऐसी लीलाओं के महिमा-गान का प्रयास अब भी जारी है और सदैव चलता रहेगा । भगवान् कृष्ण ने सुन्दर रात्रियों वाली असाधारण शरदऋतु का उपयोग अपने प्रेम व्यापार को बढ़ाने के लिए किया और वे शरदरात्रियाँ अनन्त काल से दिव्य कवियों को प्रेरणा प्रदान करती रही हैं ।

श्रीपरीक्षिदुवाच

संस्थापनाय धर्मस्य प्रशमायेतरस्य च ।

अवतीर्णो हि भगवानंशेन जगदीश्वरः ॥ २६ ॥

स कथं धर्मसेतूनां वक्ता कर्ताभिरक्षिता ।

प्रतीपमाचरद्ब्रह्मान्परदाराभिमर्शनम् ॥ २७ ॥

### शब्दार्थ

श्री-परीक्षित उवाच—श्री परीक्षित महाराज ने कहा; संस्थापनाय—स्थापना करने के लिए; धर्मस्य—धर्म की; प्रशमाय—दमन करने के लिए; इतरस्य—विरोधियों का; च—तथा; अवतीर्णः—( इस धरा पर ) अवतरित हुए; हि—निस्सन्देह; भगवान्—भगवान्; अंशेन—अपने स्वांश ( श्री बलराम ) सहित; जगत्—सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के; ईश्वरः—स्वामी; सः—वह; कथम्—किस तरह; धर्म-सेतूनाम्—आचार संहिता के; वक्ता—आदि व्याख्याता; कर्ता—करने वाले; अभिरक्षिता—रक्षक; प्रतीपम्—विरुद्ध; आचरत्—आचरण किया; ब्रह्मन्—हे ब्राह्मण, शुकदेव गोस्वामी; पर—अन्यों की; दार—पत्नियों का; अभिमर्शनम्—स्पर्श।

परीक्षित महाराज ने कहा, “हे ब्राह्मण, ब्रह्माण्ड के स्वामी पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् अपने स्वांश सहित इस धरा में अधर्म का नाश करने तथा धर्म की पुनर्स्थापना करने हेतु अवतरित हुए हैं। दरअसल वे आदि वक्ता तथा नैतिक नियमों के पालनकर्ता एवं संरक्षक हैं। तो भला वे अन्य पुरुषों की स्त्रियों का स्पर्श करके उन नियमों का अतिक्रमण कैसे कर सकते थे ?

तात्पर्य : जब शुकदेव गोस्वामी यह बतला रहे थे तो राजा परीक्षित ने गौर से देखा कि गंगा के तट पर हो रही इस गोष्ठी में से कुछ लोगों के मन में भगवान् की लीलाओं के विषय में सन्देह हो रहा था। ये संदेहयुक्त व्यक्ति कर्मी, ज्ञानी तथा अन्य लोग थे, जो कृष्णभक्त नहीं थे। अतः राजा परीक्षित ने उनके सन्देहों को दूर करने के लिए उनकी ओर से यह प्रश्न पूछा।

आप्तकामो यदुपतिः कृतवान्वै जुगुप्सितम् ।

किमभिप्राय एतन्नः शंशयं छिन्धि सुव्रत ॥ २८ ॥

### शब्दार्थ

आप्त-कामः—आत्मतुष्ट, पूर्णकाम; यदु-पतिः—यदुकुल के स्वामी ने; कृतवान्—सम्पन्न किया है; वै—निश्चय ही; जुगुप्सितम्—निन्दनीय; किम्-अभिप्रायः—किस उद्देश्य से; एतत्—यह; नः—हमारा; शंशयम्—सन्देह; छिन्धि—काट दीजिये; सु-व्रत—हे व्रतधारी।

हे श्रद्धावान् व्रतधारी, कृपा करके हमें यह बतलाकर हमारा संशय दूर कीजिये कि पूर्णकाम यदुपति के मन में वह कौन सा अभिप्राय था जिससे उन्होंने इतने निन्दनीय ढंग से आचरण किया ?

तात्पर्य : जो लोग प्रबुद्ध हैं उन्हें पता है कि ऐसे संदेह उन लोगों के मन तथा हृदय में उठेंगे जो भगवान् की दिव्य लीलाओं से परिचित नहीं हैं। इसलिए अनन्त काल से बड़े बड़े मुनि तथा परीक्षित महाराज जैसे प्रबुद्ध राजा आगे आने वाली पीढ़ी के लिए प्रामाणिक उत्तर देने के लिए ऐसे प्रश्न उठाते रहे हैं।

श्रीशुक उवाच

धर्मव्यतिक्रमो दृष्ट ईश्वराणां च साहसम् ।  
तेजीयसां न दोषाय वह्नेः सर्वभुजो यथा ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्रीशुकदेव गोस्वामी ने कहा; धर्म-व्यतिक्रमः—धार्मिक या नैतिक सिद्धान्तों का उल्लंघन; दृष्टः—देखा हुआ; ईश्वराणाम्—शक्तिशाली नियंत्रकों का; च—भी; साहसम्—साहस; तेजीयसाम्—आध्यात्मिक रूप से शक्तिमान; न—नहीं; दोषाय—किसी प्रकार की त्रुटि ( होने देता ); वह्नेः—अग्नि का; सर्व—सभी; भुजः—निगलते हुए; यथा-अस्.

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : शक्तिशाली नियन्ताओं के पद पर किसी ऊपरी साहसपूर्ण उल्लंघन से जो हम उनमें देख पायें, कोई आँच नहीं आती क्योंकि वे उस अग्नि के समान होते हैं, जो हर वस्तु को निगल जाती है और अदूषित बनी रहती है ।

तात्पर्य : महान् शक्तिशाली व्यक्ति नैतिक सिद्धान्तों के ऊपरी उल्लंघन से विनष्ट नहीं होते । श्रीधर स्वामी ब्रह्मा, इन्द्र, सोम, विश्वामित्र इत्यादि का उदाहरण देते हैं । अग्नि में जो कुछ डाल दिया जाये उसे वह निगल जाती है किन्तु उसके स्वभाव में कोई परिवर्तन नहीं आता । इसी तरह कोई महान् व्यक्ति आचरण की अनियमितता से अपने पद से नीचे नहीं गिरता । किन्तु अगले श्लोक में शुकदेव गोस्वामी ने स्पष्ट किया है कि यदि हम ब्रह्माण्ड पर शासन करने वाले महान् व्यक्तियों की नकल करें तो उसका परिणाम भयावह होगा ।

नैतत्समाचरेज्जातु मनसापि ह्यनीश्वरः ।  
विनश्यत्याचरन्मौढ्याद्यथारुद्रोऽब्धिजं विषम् ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; एतत्—यह; समाचरेत्—करना चाहिए; जातु—कभी; मनसा—मन से; अपि—भी; हि—निश्चय ही; अनीश्वरः—जो नियन्ता नहीं है; विनश्यति—विनष्ट हो जाता है; आचरन्—आचरण करने पर; मौढ्यात्—मूर्खतावश; यथा—जिस तरह; अरुद्रः—जो रुद्र नहीं है; अब्धिजम्—समुद्र से उत्पन्न; विषम्—विष को ।

जो महान् संयमकारी नहीं है, उसे शासन करने वाले महान् पुरुषों के आचरण की मन से भी कभी नकल नहीं करनी चाहिए । यदि कोई सामान्य व्यक्ति मूर्खतावश ऐसे आचरण की नकल करता है, तो वह उसी तरह विनष्ट हो जायेगा जिस तरह कि विष के सागर को पीने का प्रयास करने वाला व्यक्ति । यदि वह रुद्र नहीं है, नष्ट हो जायेगा ।

तात्पर्य : शिवजी या रुद्र ने एक बार समुद्र-विष का पान किया जिसका परिणाम यह हुआ कि उनके गले में एक आकर्षक नीला चिह्न बन गया । किन्तु यदि हमें ऐसे विष की एक बूँद भी पीनी पड़े



तो हम तुरन्त मर जायेंगे। जिस तरह हमें शिवजी की इस लीला की नकल नहीं करनी चाहिए उसी तरह हमें गोपियों के साथ कृष्ण के कार्यकलापों की भी नकल नहीं उतारनी चाहिए। हमें यह भलीभाँति समझ लेना चाहिए कि यद्यपि भगवान् कृष्ण निश्चित रूप से धर्म की स्थापना करने के लिए अवतरित होते हैं उसी तरह वे यह भी दिखाने के लिए अवतरित होते हैं कि वे ईश्वर हैं किन्तु हम नहीं। वह भी प्रदर्शित करना चाहिये। भगवान् अपनी अन्तरंगाशक्ति के साथ भोग करते हैं और इस तरह हमें आध्यात्मिक पद की ओर आकृष्ट करते हैं। हमें चाहिए कि हम कृष्ण की नकल करने का प्रयास न करें क्योंकि इससे हमें घोर कष्ट मिलेगा।

ईश्वराणां वचः सत्यं तथैवाचरितं क्वचित् ।  
तेषां यत्स्ववचोयुक्तं बुद्धिमांस्तत्समाचरेत् ॥ ३१ ॥

#### शब्दार्थ

ईश्वरानाम्—भगवान् द्वारा शक्ति प्रदत्त दासों के; वचः—शब्द; सत्यम्—सत्य; तथा एव—भी; आचरितम्—वे जो कुछ करते हैं; क्वचित्—कभी कभी; तेषाम्—उनके; यत्—जो; स्व-वचः—अपने ही शब्दों से; युक्तम्—अनुरूप; बुद्धि-मान्—बुद्धिमान; तत्—वह; समाचरेत्—सम्पन्न करे।

भगवान् द्वारा शक्तिप्रदत्त दासों के वचन सदैव सत्य होते हैं और जब वे इन वचनों के अनुरूप कर्म करते हैं, तो वे आदर्श होते हैं। इसलिए जो बुद्धिमान है उस को चाहिए कि इनके आदेशों को पूरा करे।

तात्पर्य : संस्कृत कोशों में ईश्वर शब्द के कई अर्थ मिलते हैं—प्रभु, स्वामी, शासक अथवा समर्थ। श्रील प्रभुपाद ने प्रायः ईश्वर का “नियन्ता” अर्थ दिया है, जो स्वामी, शासक के साथ साथ समर्थ व्यक्ति के भावों को समाहित करने वाला है। स्वामी अक्षम हो सकता है किन्तु नियन्ता तो वह स्वामी है, जो वस्तुओं को घटित कराता है। परमेश्वर या परमनियन्ता ही समस्त कारणों के कारण भगवान् कृष्ण हैं।

यद्यपि सामान्य लोग विशेषतया पाश्चात्य देशों के लोग इस तथ्य से अवगत नहीं हैं किन्तु शक्तिशाली व्यक्ति हमारे ब्रह्माण्ड को नियंत्रित करते हैं। ब्रह्माण्ड की आधुनिक निर्विशेष विचार-धारा ब्रह्माण्ड को लगभग पूर्णतया निर्जीव के रूप में चित्रित करती है, जिसमें पृथ्वी व्यर्थ में तैरती रहती है। इस तरह हमारे पास रह जाता है हमारे प्रजनन नियमों को प्रदर्शित करने और सुरक्षित रखने का निरर्थक परम लक्ष्य जिसका अपने आपको दुबारा जन्म देने से घटनाओं की निरर्थक शृंखला में एक

और कड़ी जोड़ने का अपना ही परम लक्ष्य होता है।

अज्ञानी भौतिकवादी लोगों द्वारा बनाए गए इस निरर्थक संसार के सर्वथा विपरीत है वास्तविक ब्रह्माण्ड जीवन से ओतप्रोत है और वस्तुतः ईश्वर से ओतप्रोत है, जो समस्त वस्तुओं में व्याप्त हैं और जो सबों को धारण करता है। भगवान् तथा असंख्य जीवों से, जिनमें हम भी सम्मिलित हैं, उनके निजी सम्बन्ध ही वास्तविक हैं। कुछ जीव भौतिकतावाद के मोह में फँसे हैं या भौतिक शरीर से पहचान मानते हैं, तो कुछ मुक्त हैं और अपने नित्य आध्यात्मिक स्वरूप से परिचित हैं। तीसरी श्रेणी के लोग वे हैं, जो अज्ञान की भौतिकतावादी अवस्था से कृष्णभावनामृत की प्रबुद्ध अवस्था की ओर अग्रसर हो रहे होते हैं।

अन्ततोगत्वा वास्तविकता साकार तथा दैवी होती है, अतः इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि जैसा हमें वैदिक साहित्य से पता चलता है हमारा ब्रह्माण्ड तथा अन्य सारे ब्रह्माण्ड महान् पुरुषों द्वारा उसी तरह नियंत्रित होते हैं जिस तरह हमारे शहर, राज्य तथा हमारे देश शक्तिप्रदत्त व्यक्तियों द्वारा संचालित होते हैं। जब हम प्रजातांत्रिक रूप से किसी राजनीतिक व्यक्ति को शासन करने का अधिकार सौंप देते हैं, तो हम उसे अपना वोट देते हैं क्योंकि उसमें “नायकत्व” या “क्षमता” पाई जाती है। हम सोचते हैं कि वह यह कार्य करवा लेगा। दूसरे शब्दों में, जब कोई व्यक्ति शासन करने की शक्ति अर्जित कर लेता है तभी हम उसे अपना वोट देते हैं। हमारे वोट से वह नेता नहीं बनता किन्तु इस तरह हम उसमें किसी अन्य स्रोत से शक्ति आते देखने पर उसे नेता मानते हैं। इस प्रकार जैसाकि *भगवद्गीता* के दसवें अध्याय के अन्त में भगवान् कृष्ण बतलाते हैं कि यदि किसी व्यक्ति में असामान्य शक्ति, क्षमता या सत्ता प्रकट हो तो वह अवश्य ही साक्षात् भगवान् द्वारा या भगवान् की शक्ति द्वारा शक्तिप्रदत्त हुआ होगा।

जो लोग सीधे भगवान् से शक्ति प्राप्त किये रहते हैं, वे उनके भक्त होते हैं। इस तरह सारे विश्व में उनकी शक्ति तथा प्रभाव से अच्छाई फैल जाती है। किन्तु जिन्हें कृष्ण की माया द्वारा शक्ति प्राप्त होती है वे कृष्ण से अप्रत्यक्ष सम्बन्ध रखते हैं क्योंकि उनमें भगवान् की इच्छा सीधे प्रतिबिम्बित नहीं होती। हाँ, वे अप्रत्यक्ष रूप से उनकी इच्छा प्रतिबिम्बित करते हैं क्योंकि कृष्ण की व्यवस्थानुसार प्रकृति के नियम अज्ञानी जीवों पर प्रभाव डालकर उन्हें धीरे धीरे अनेकानेक जन्मों के बाद भगवान् की शरण

ग्रहण करने के लिए बहलाते हैं। इस तरह राजनीतिक लोग अपने अनुयायी भौतिकतावादी व्यक्तियों को झूठी आशाएँ दिलाते हैं, युद्ध करते हैं और असंख्य जोशीली योजनाएँ बनाते हैं। ये राजनीतिक लोग बद्धजीवों को ईश्वर-विमुखता का तिक्त फल चखाकर अप्रत्यक्ष रूप से भगवान् के कार्यक्रम को पूरा करते हैं।

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने *ईश्वराणाम्* शब्द का “ज्ञान तथा तपस्या के बल पर शक्तिशाली बने हुए” किया है। ज्यों ज्यों मनुष्य ईश्वर के स्वभाव तथा उनकी इच्छा को समझने लगता है और आध्यात्मिक जीवन में श्रेष्ठता प्राप्त करने के लिए निजी त्याग करता है त्यों त्यों भगवान् उसे शक्ति प्रदान करते हैं जिससे वह उनकी इच्छा का प्रतिनिधित्व कर सके जिसे उसने बुद्धिमानी से समझा है और स्वीकार किया है।

भगवान् इस धरती पर धार्मिक आचरण का जीता-जागता दृष्टान्त प्रस्तुत करने हेतु अवतरित होते हैं। जैसाकि भगवान् ने *भगवद्गीता* (३.२४) में कहा है “यदि मैं आदर्श कर्तव्य का पालन न करूँ तो सारा संसार पथ-भ्रष्ट होकर विनष्ट हो जाय।” इस तरह भगवान् ने अपने विविध अवतारों द्वारा यह दिखलाया कि इस जगत में किस तरह उचित कर्म करना चाहिए। इसका उत्तम उदाहरण भगवान् रामचन्द्र हैं जिन्होंने राजा दशरथ के पुत्र रूप में अद्भुत आचरण किया।

किन्तु जब साक्षात् भगवान् कृष्ण अवतरित होते हैं, तो वे चरम धर्म का भी प्रदर्शन करते हैं—यह कि भगवान् अन्य समस्त जीवों से परे हैं और उनके परमपद की नकल कोई नहीं कर सकता। समस्त धर्मों में अग्रगण्य इसी सिद्धान्त का—कि भगवान् अद्वितीय हैं, न तो कोई उनके समान है न उनसे बढ़कर है—स्पष्ट रूप से प्रदर्शन गोपियों के साथ अश्लीलसी दिखने वाली कृष्ण की लीलाओं में हुआ। जैसाकि शुकदेव गोस्वामी ने बतलाया है कोई भी व्यक्ति इन लीलाओं की नकल दुष्परिणामों को भुगते बिना नहीं कर सकता। जो यह सोचता है कि भगवान् कृष्ण सामान्य कामी पुरुष हैं या जो व्यक्ति उनके रासनृत्य को प्रशंसनीय मानकर उसकी नकल करना चाहता है, वह निश्चित रूप से विनष्ट हो जायेगा जैसाकि इस अध्याय के श्लोक ३० में बतलाया जा चुका है।

अन्त में भगवान् तथा उनके शक्तिप्रदत्त दासों में अन्तर करना होगा। भगवान् का शक्तिप्रदत्त दास, जैसाकि ब्रह्मा, अपने पूर्वकर्मों का बचा हुआ फल कर्म के नियमानुसार पाता है। किन्तु भगवान् कर्म के

नियमों के चंगुल से सर्वथा मुक्त हैं। वे अद्वितीय पद पर हैं।

कुशलाचरितेनैषामिह स्वार्थो न विद्यते ।

विपर्ययेण वानर्थो निरहङ्कारिणां प्रभो ॥ ३२ ॥

#### शब्दार्थ

कुशल—पवित्र; आचरितेन—कार्य द्वारा; एषाम्—उनके लिए; इह—इस जगत में; स्व-अर्थ:—निजी लाभ; न विद्यते—नहीं होता; विपर्ययेण—विपरीत द्वारा; वा—अथवा; अनर्थ:—अवांछित फल; निरहङ्कारिणाम्—मिथ्या गर्व से मुक्त लोगों का; प्रभो—हे प्रभु।

हे प्रभु, जब मिथ्या अहंकार से रहित ये महान् व्यक्ति इस जगत में पवित्र भाव से कर्म करते हैं, तो उसमें उनका कोई स्वार्थ-भाव नहीं होता और जब वे ऊपरी तौर से पवित्रता के नियमों के विरुद्ध लगने वाले कर्म ( अनर्थ ) करते हैं, तो भी उन्हें पापों का फल नहीं भोगना पड़ता।

किमुताखिलसत्त्वानां तिर्यङ्मर्त्यदिवौकसाम् ।

ईशितुश्चेशितव्यानां कुशलाकुशलान्वयः ॥ ३३ ॥

#### शब्दार्थ

किम् उत—तो फिर क्या कहा जाय; अखिल—समस्त; सत्त्वानाम्—सृजित प्राणियों का; तिर्यक्—पशुओं; मर्त्य—मनुष्यों; दिव-ओकसाम्—तथा स्वर्ग के निवासियों का; ईशितुः—नियन्ता के लिए; च—तथा; ईशितव्यानाम्—नियंत्रितों का; कुशल—शुभ; अकुशल—तथा अशुभ; अन्वयः—कारणरूप सम्बन्ध।

तो फिर समस्त सृजित प्राणियों पशुओं, मनुष्यों तथा देवताओं—के स्वामी भला उस शुभ तथा अशुभ से किसी प्रकार का सम्बन्ध कैसे रख सकते हैं जिससे उनके अधीनस्थ प्राणी प्रभावित होते हों?

तात्पर्य : जैसाकि श्लोक ३२ में कहा गया है, भगवान् द्वारा शक्तिप्रदत्त महान् पुरुष भी कर्म के नियमों से मुक्त होते हैं, तो फिर साक्षात् भगवान् के विषय में क्या कहा जा सकता है। आखिर कर्म-नियम उन्हीं के द्वारा बनाया हुआ है और उनकी सर्वशक्तिमान् इच्छा का प्रतीक है। अतः वे जो भी कार्य अपनी शुद्ध इच्छा से करते हैं उनकी आलोचना सामान्य लोग नहीं कर सकते।

यत्पादपङ्कजपरागनिषेवतृप्ता

योगप्रभावविधुताखिलकर्मबन्धाः ।

स्वैरं चरन्ति मुनयोऽपि न नह्यमाना-

स्तस्येच्छयात्तवपुषः कुत एव बन्धः ॥ ३४ ॥

#### शब्दार्थ

यत्—जिसके; पाद-पङ्कज—चरणकमलों की; पराग—धूलि के; निषेव—सेवन करने से; तृप्ताः—तृप्त; योग-प्रभाव—योग शक्ति से; विधुत—धुला हुआ; अखिल—समस्त; कर्म—सकाम कर्म का; बन्धाः—बन्धन; स्वैरम्—मुक्तभाव से; चरन्ति—कर्म करते हैं; मुनयः—मुनिगण; अपि—भी; न—कभी नहीं; नह्यमानाः—बद्ध होकर; तस्य—उसकी; इच्छया—इच्छा से; आत्त—स्वीकार किया; वपुषः—दिव्य शरीर; कुतः—कहाँ; एव—निस्सन्देह; बन्धः—बन्धन।

जो भगवद्भक्त भगवान् के चरणकमलों की धूलि का सेवन करते हुए पूर्णतया तृष्ट हैं उन्हें भौतिक कर्म कभी नहीं बाँध पाते। न ही भौतिक कर्म उन बुद्धिमान मुनियों को बाँध पाते हैं जिन्होंने योगशक्ति के द्वारा अपने को समस्त कर्मफलों के बन्धन से मुक्त कर लिया है। तो फिर स्वयं भगवान् के बन्धन का प्रश्न कहाँ उठता है, जो स्वेच्छा से दिव्य रूप धारण करने वाले हैं?

गोपीनां तत्पतीनां च सर्वेषामेव देहिनाम् ।

योऽन्तश्चरति सोऽध्यक्षः क्रीडनेनेह देहभाक् ॥ ३५ ॥

#### शब्दार्थ

गोपीनाम्—गोपियों के; तत्-पतीनाम्—उनके पतियों के; च—तथा; सर्वेषाम्—समस्त; एव—निस्सन्देह; देहिनाम्—देहधारी जीवों के; यः—जो; अन्तः—भीतर; चरति—रहता है; सः—वह; अध्यक्षः—साक्षी; क्रीडनेन—क्रीड़ा के लिए; इह—इस संसार में; देह—अपना रूप; भाक्—धारण करते हुए।

जो गोपियों तथा उनके पतियों और वस्तुतः समस्त देह-धारी जीवों के भीतर साक्षी के रूप में रहता है, वही दिव्य लीलाओं का आनन्द लेने के लिए इस जगत में विविध रूप धारण करता है।

तात्पर्य : हम भगवान् की तरह दिव्य लीलाओं का आनन्द उठाने के लिए देह-धारण नहीं करते। हम नित्य आत्माओं ने इस भौतिक जगत का आनन्द उठाने के मूर्खतापूर्ण प्रयास के कारण विवश होकर भौतिक शरीर स्वीकार किया है। भगवान् के सभी रूप शाश्वत और दिव्य हैं और उनकी समता किसी भी तर्क से हमारे नाशवान हाड़-मांस के बने शरीरों से नहीं की जा सकती।

चूँकि श्रीकृष्ण परमेश्वर हैं, जो गोपियों, उनके तथाकथित पतियों तथा अन्य समस्त जीवों के भीतर निवास करने वाले हैं, तो यदि वे अपने द्वारा सृजित प्राणियों में से कुछ का आलिंगन करें तो इसमें कौन सा पाप है? इसमें कौन सा दोष है यदि भगवान् गोपियों के साथ किसी गुप्तस्थान में चले जाते हैं जबकि वे प्रत्येक जीव के सर्वाधिक गुह्य भाग हृदय के भीतर निवास करते हैं।

अनुग्रहाय भक्तानां मानुषं देहमास्थितः ।

भजते तादृशीः क्रीड याः श्रुत्वा तत्परो भवेत् ॥ ३६ ॥

## शब्दार्थ

अनुग्रहाय—दया दिखाने के लिए; भक्तानाम्—अपने भक्तों पर; मानुषम्—मनुष्य जैसा; देहम्—शरीर; आस्थितः—धारण करते हुए; भजते—स्वीकार करता है; तादृशीः—वैसी; क्रिडाः—लीलाएँ; याः—जिनके बारे में; श्रुत्वा—सुनकर; तत्-परः—उनके प्रति परायण; भवेत्—हो जाता है।

जब भगवान् अपने भक्तों पर कृपा प्रदर्शित करने के लिए मनुष्य जैसा शरीर धारण करते हैं, तो वे ऐसी क्रीड़ाएँ करते हैं जिनके विषय में सुनने वाले आकृष्ट होकर भगवत्परायण हो जाँय।

तात्पर्य : इस सन्दर्भ में श्रील जीव गोस्वामी की व्याख्या है कि जब भगवान् कृष्ण अपने आदि द्विभुज रूप में इस जगत में अवतरित होते हैं, तो वे कृपा करके यह रूप प्रदर्शित करते हैं जिससे मानव समाज में बद्ध उनके भक्त उन्हें देख तथा समझ सकें। इसीलिए यहाँ पर कहा गया है—*मानुषं देहमास्थितः*—वे मनुष्य जैसा शरीर धारण करते हैं। श्री विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर यह कहकर भगवान् की माधुर्य लीलाओं का यशोगान करते हैं कि इन प्रेमभरे कार्यों में बद्धजीवों के दूषित हृदय को आकर्षित करने की अकल्पनीय दिव्य क्षमता है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि कोई भी शुद्ध या सरल हृदय वाला व्यक्ति कृष्ण की प्रेमपूर्ण लीलाओं को सुनकर भगवान् के चरणकमलों के प्रति आकृष्ट होगा और क्रमशः उनका भक्त बन जायेगा।

नासूयन्खलु कृष्णाय मोहितास्तस्य मायया ।

मन्यमानाः स्वपार्श्वस्थान्स्वान्स्वान्दारान्ब्रजौकसः ॥ ३७ ॥

## शब्दार्थ

न असूयन्—ईर्ष्यालु नहीं थे; खलु—यहाँ तक कि; कृष्णाय—कृष्ण से; मोहिताः—मोहित; तस्य—उसकी; मायया—माया द्वारा; मन्यमानाः—सोचते हुए; स्व-पार्श्व—अपने निकट; स्थान्—खड़ी हुई; स्वान् स्वान्—अपनी अपनी; दारान्—पत्नियाँ; ब्रज-ओकसः—ब्रज के गोपजन।

कृष्ण की मायाशक्ति से मोहित सारे ग्वालों ने सोचा कि उनकी पत्नियाँ घरों में उनके निकट ही रहती रही थीं। इस तरह उनमें कृष्ण के प्रति कोई ईर्ष्या भाव नहीं उत्पन्न हुआ।

तात्पर्य : चूँकि गोपियाँ कृष्ण से एकान्तिक प्रेम करती थीं इसलिए योगमाया ने सदैव भगवान् के प्रति उनके सम्बन्ध की रक्षा की यद्यपि ये गोपियाँ विवाहिता थीं। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ने उज्ज्वल नीलमणि से निम्नलिखित उद्धरण दिया है—

*मायाकल्पिततादृक् शीलनेनानुसूयुभिः ।*

*न जातु ब्रजदेवीनां पतिभिः सह सङ्गमः ॥*

“गोपियों के ईर्ष्यालु पतियों ने अपनी पत्नियों से नहीं अपितु माया द्वारा निर्मित पत्नियों से विलास किया। इस तरह इन पुरुषों का ब्रज की देवियों से कोई घनिष्ठ सम्बन्ध नहीं हुआ।” गोपियाँ भगवान् की अन्तरंगा शक्ति हैं अतएव वे किसी अन्य जीव की नहीं हो सकतीं। कृष्ण ने परकीय रस की उत्पत्ति के लिए ही अन्य पुरुषों के साथ उनका विवाह रचाया। ये लीलाएँ नितान्त शुद्ध हैं क्योंकि वे भगवान् की लीलाएँ हैं और सन्त पुरुष इन परम दिव्य घटनाओं का रसास्वादन अनन्त काल से करते चले आ रहे हैं।

ब्रह्मरात्र उपावृत्ते वासुदेवानुमोदिताः ।

अनिच्छन्त्यो ययुर्गोप्यः स्वगृहान्भगवत्प्रियाः ॥ ३८ ॥

### शब्दार्थ

ब्रह्म-रात्रे—ब्रह्मा की रात; उपावृत्ते—पूर्ण होने पर; वासुदेव—भगवान् कृष्ण द्वारा; अनुमोदिताः—अनुमोदन किये जाने पर; अनिच्छन्त्यः—न चाहती हुई; ययुः—चली गई; गोप्यः—गोपियाँ; स्व-गृहान्—अपने घरों को; भगवत्—भगवान् की; प्रियाः—प्रियतमाएँ।

जब ब्रह्मा की पूरी एक रात बीत गई तो कृष्ण ने गोपियों को अपने अपने घरों को लौट जाने की सलाह दी। यद्यपि वे ऐसा करना नहीं चाह रही थीं तो भी भगवान् की इन प्रेयसियों ने उनके आदेश का पालन किया।

तात्पर्य : भगवद्गीता (८.१७) में भगवान् कृष्ण बतलाते हैं “मानवीय गणना के अनुसार एक हजार युग मिलकर ब्रह्मा के एक दिन के बराबर होते हैं। और रात्रि भी इतनी ही बड़ी होती है।” अतः जब भगवान् कृष्ण ने अपना रासनृत्य किया, तो बारह घंटे की एक ही रात में एक हजार युग प्रवेश कर गये। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती इस अकल्पनीय काल की तुलना इस तथ्य से करते हैं कि पृथ्वी पर वृन्दावन के चारों ओर लगभग चालीस मील में अनेक ब्रह्माण्ड समा सकते हैं। या कोई यह विचार कर सकता है कि माता यशोदा बालक कृष्ण की छोटी-सी कमर अनेक रस्सियों से भी नहीं बाँध पाई और एक अन्य अवसर पर भगवान् ने अपने मुँह के भीतर अनेक ब्रह्माण्ड दिखलाये। संसारी भौतिकी से परे आध्यात्मिक सत्यता की व्याख्या श्रील रूप गोस्वामी कृत लघु भागवतामृत में संक्षिप्त में पाई जाती है :

एवं प्रभो प्रियाणां च धाम्नश्च समयस्य च ।

अविचिन्त्यप्रभावत्वादत्र किञ्चिन्न दुर्घटम ॥

“भगवान्, उनके प्रिय भक्तों, उनके दिव्य धाम या उनकी लीलाओं के समय के लिए कुछ भी

असम्भव नहीं है क्योंकि ये सारी बातें अचिन्त्य रूप से शक्तिशाली हैं।”

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती इसके बाद व्याख्या करते हुए कहते हैं कि इससे सूचित होता है कि कृष्ण ने गोपियों को सलाह दी कि “इन लीलाओं को सफल बनाने के लिए तुम्हें तथा मुझे इन्हें गुप्त रखना होगा।” वासुदेव शब्द, जो कि कृष्ण का नाम है भगवान् कृष्ण के स्वांश का भी सूचक है, जो चेतना के मुख्य अधिष्ठाता का कार्य करता है। इस तरह जब वासुदेव शब्द इस संदर्भ में समझ लिया जाता है, तो वासुदेवानुमोदिताः शब्द सूचित करता है कि चेतना के मुख्य अधिष्ठाता वासुदेव ने गोपियों के हृदयों में उनके गुरुजनों की चिन्ता तथा भय का बोध करा दिया था जिससे वे युवतियाँ बहुत हिचकिचाहट के साथ घर वापस जा सकीं।

विक्रीडितं व्रजवधूभिरिदं च विष्णोः

श्रद्धान्वितोऽनुश्रुणुयादथ वर्णयेद्यः ।

भक्तिं परां भगवति प्रतिलभ्य कामं

हृद्रोगमाश्रुपहिनोत्यचिरेण धीरः ॥ ३९ ॥

#### शब्दार्थ

विक्रीडितम्—क्रीड़ा करना; व्रज-वधूभिः—वृन्दावन की युवतियों के साथ; इदम्—यह; च—तथा; विष्णोः—भगवान् विष्णु द्वारा; श्रद्धा-अन्वितः—श्रद्धापूर्वक; अनुश्रुणुयात्—सुनता है; अथ—अथवा; वर्णयेत्—वर्णन करता है; यः—जो; भक्तिम्—भक्ति; पराम्—दिव्य; भगवति—भगवान् में; प्रतिलभ्य—प्राप्त करके; कामम्—भौतिक कामवासना को; हृत्—हृदय में; रोगम्—रोग को; अशु—तुरन्त; अपहिनोति—भगा देताहै; अचिरेण—शीघ्र ही; धीरः—गम्भीर।

जो कोई वृन्दावन की युवा-गोपिकाओं के साथ भगवान् की क्रीड़ाओं को श्रद्धापूर्वक सुनता है या उनका वर्णन करता है, वह भगवान् की शुद्ध भक्ति प्राप्त करेगा। इस तरह वह शीघ्र ही धीर बन जाएगा और हृदय रोग रूपी कामवासना को जीत लेगा।

तात्पर्य : यहाँ पर कृष्ण की माधुर्य लीलाओं की असाधारण शक्ति स्पष्ट रूप से प्रकट होती है। गुणात्मक दृष्टि से भगवान् की आध्यात्मिक प्रेममयी लीलाएँ भौतिक वासनापूर्ण व्यापारों से सर्वथा विपरीत होती हैं यहाँ तक कि भगवान् की लीलाओं के श्रवण मात्र से भक्त कामेच्छा पर विजय पा लेता है। अश्लील साहित्य पढ़ने या भौतिक प्रेमालाप सुनने से हमारी कामेच्छा विनष्ट नहीं होती अपितु बढ़ती है। किन्तु भगवान् के माधुर्य व्यापारों के विषय में सुनने या पढ़ने से इसका सर्वथा विपरीत प्रभाव पड़ता है क्योंकि वे विपरीत प्रकार के और नितान्त आध्यात्मिक होते हैं। अतः कृष्ण अपनी अहैतुकी कृपा से इस जगत में अपनी रासलीला प्रदर्शित करते हैं। यदि हम इस कथा में अनुरक्त हो



सकें तो हमें आध्यात्मिक प्रेम का आनन्द अनुभव होगा और हम विषयवासना का परित्याग कर देंगे जो उस प्रेम का विकृत प्रतिबिम्ब है। *भगवद्गीता* (२.५९) में कृष्ण ने बड़े ही सुन्दर ढंग से कहा है *परं दृष्ट्वा निवर्तते*—परब्रह्म का एक बार प्रत्यक्ष अनुभव हो जाने पर मनुष्य भौतिक आनन्द की ओर मुँह नहीं करेगा।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कन्ध के अन्तर्गत 'रासनृत्य' नामक तैंतीसवे अध्याय के श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के विनीत सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।